PEHCHAN

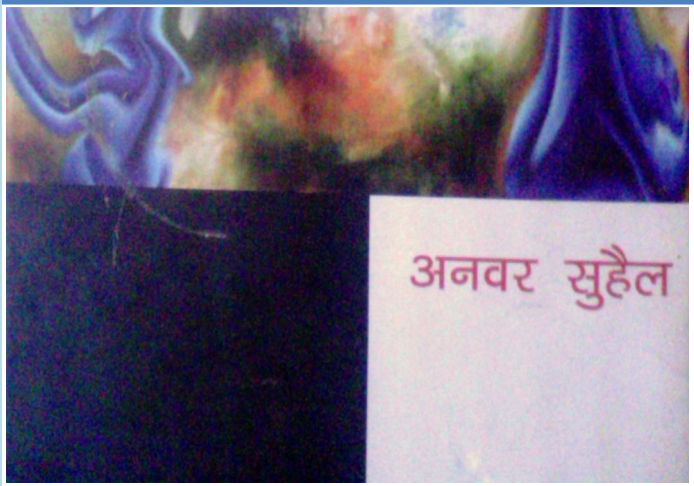

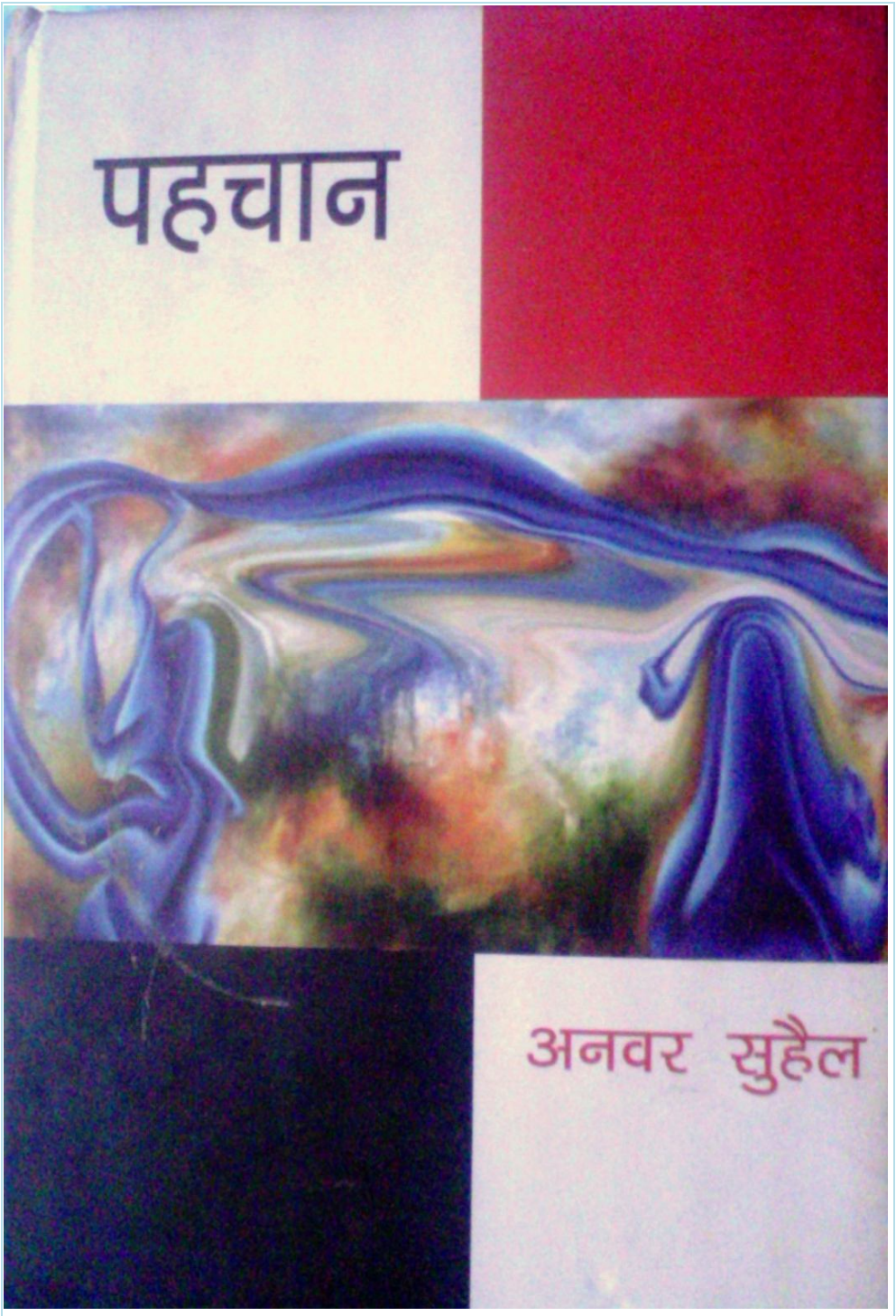

Pehchan : Hindi Novellette : Anwar Suhail

पहचान

लघु-उपन्यास

अनवर सुहैल

पहचान
संकट

एक

यूनुस एक बार फिर भाग रहा है।
ठीक इसी तरह उसका भाई सलीम भी भागा करता था।
लेकिन क्या भागना ही उसकी समस्या का समाधान है?
यूनुस ने अपना सिर झटक दिया।
विचारों के युद्ध से बचने के लिए वह यही तरीका अपनाता।
इस वक्त वह सिंगरौली स्टेशन के प्लेटफार्म पर खड़ा है।
सिंगरौली रेल्वे स्टेशन।
अभी रात के ग्यारह बजे हैं।
कटनी-चौपन पैसेंजर रात बारह के बाद ही आएगी।
प्लेटफार्म कब्रिस्तान बना हुआ है। ठंड की चादर ओढ़कर सोया कब्रिस्तान। धुंधली रोशनी में कुहरे की हिलती चादर। लोग चलते तो यूं लगता जैसे कब्रों का रखवाला आकर दौरा कर जाता हो। जहां ऐसा लगता है कि कब्रों से उठकर आत्माएं सफेद, काले कपड़े से बदन लपेटे गश्त कर रही हों।
आजकल भीड़ की कोई वजह नहीं है।

कटनी-चोपन पैसेंजर की यही तो पहचान है कि बोगियों और मुसाफिरों की संख्या समान होती है।

यूनुस को भीड़ की परवाह भी नहीं।

सफ़र में सामान की हिफाजत का भरोसा हो जाए तो वह बैठने की जगह भी न मांगे।

उसके पास सामान भी क्या है? एक एयर-बैग ही तो है।

उसे कहीं भी टिका वह घूम-फिर सकता है।

दिसम्बर की कड़कड़ाती ठंड...

दिखाई देने वाला हर आदमी सिकुड़ा-सिमटा हुआ। बदन पर ढेरों कपड़े लादे। फिर भी ठंड से कंपकंपाए।

इधर ठंड कुछ अधिक पड़ती भी है। बघेल-खंड का इलाका है यह! दांतों को कड़कड़ा देने वाली ठंड के लिए मशहूर सिंगरौली का रेल्वे स्टेशन! पहाड़ी इलाका, कोयला खदान और ताप-विद्युत इकाईयों के कारण मानो जान बच जाती है, वरना ऐसी ठंड पड़ती कि अच्छे-खासे लोग टें बोल जाएं।

स्टेशन-मास्टर के कमरे के बगल में प्रथम एवम् द्वितीय श्रेणी शयनयान के आरक्षित यात्रियों के लिए प्रतीक्षालय है। दरवाज़े में लगे कांच पर धुंध छा गई थी, इसलिए यूनुस ने भिड़काए दरवाज़े को ठेलकर भीतर झांका।

वहां एक अधेड़ आदमी और एक स्त्री बैठे हुए थे। एनटीपीसी या फिर कॉलरी का साहब हो। वैसे भी किसी ऐरे-गैरे के लिए प्रतीक्षालय नहीं खोला जाता।

प्रतीक्षालय के बगल में रनिंग-स्टाफ रूम था। फिर उसके बाद आरपीएफ के जवानों के लिए कमरा था।

उस कमरे के बाहर रात्रि-पाली के कर्मचारियों ने सिगड़ी में आग जला रखी थी। चार आदमी आग ताप रहे थे। उनके बीच थोड़ी सी जगह बची थी, जहां एक कुत्ता बदन सेंक रहा था। यूनुस कुत्ते के पास जाकर खड़ा हो गया। सिगड़ी की आंच की सिंकाई से उसे कुछ राहत मिली।

रेल्वे के कर्मचारी अप-डाउन, एईएन, सायरन, डिरेल, सिग्नल आदि शब्दों का उच्चारण कर अपने विचारों का आदान-प्रदान कर रहे थे।

मफलर से आंख छोड़ पूरा चेहरा लपेटे एक कर्मचारी बोला-''भाईजान, आज शाम तबीयत कुछ डाउन लग रही थी। कड़क चाय बनवाकर पी लेकिन पिकअप न बना। ऐसे सिग्नल मिले कि लगा इस बार पायलट डिरेल हुआ, तो फिर उठाना मुश्किल होगा। तभी दिमाग में सायरन बजा और तुरंत भट्टी पहुंचे। वहां फोर-डाउन वाला मिसरवा गार्ड मिल गया। दोनों ने मिल कर मूड बनाया। तब जाकर जान बची।''

यूनुस थोड़ी देर उनकी बात से लुत्फ उठाता रहा, फिर स्टेशन से बाहर निकल आया।

बाहर एक बड़ा सा पार्क है। पार्क के दोनों ओर दो सड़कें निकली हैं। दोनों सड़कें आगे जाकर मेन-रोड से मिलती हैं।

पार्क के सामने रोड के किनारे-किनारे, एक लाईन से कई टेक्सियां और एक मिनी-बस खड़ी थी। इन टेक्सियों या मिनी बसों के चालक अमूमन उनके मालिक होते हैं।

एक पेड़ का मोटा सा सूखा तना सुलगाए वे आग ताप रहे थे।

एक खलासीनुमा चेला चिलम बना रहा था।

यूनुस वहां रूका नहीं।

वह बाईं ओर की ढाल-दार सड़क पर चल पड़ा। मेन-रोड के उस पार तीन-चार होटल हैं।

ये होटल चौबीस घण्टे सर्विस देते हैं। उन होटलों में लालटेन जल रही थी।

उसने होटल का जायजा लिया। पहला छोड़ दूसरे होटल में एक महिला भट्टी के पास खड़ी चाय बना रही थी।

यूनुस उसी होटल में घुसा।

सीधे भट्टी के पास पहुंच गया। उसने कंधे पर टंगा एयर-बैग उतार कर एक कुर्सी पर रख दिया। फिर हथेलियों को आपस में रगड़ते हुए आग तापने लगा।

महिला ने उसे घूरकर देखा।

यूनुस को उसका घूरना अच्छा लगा।

वह तीस-बत्तीस साल की महिला थी। भट्टी की लाल आंच और लालटेन की पीली रोशनी के मिले-जुले प्रभाव में उसका चेहरा भला लग रहा था। जैसे तांबई-सुनहरी आभा लिए कोई कांस्य-कृति।

महिला ने चाय केतली में ढालते हुए पूछा-''क्या चाहिए?''

यूनुस ने मजा लेना चाहा-''यहां क्या-क्या मिलता है?''

महिला ने उसे घूरकर देखा, फिर जाने क्या सोचकर हंस दी।

होटल के तीन हिस्से थे। आधे हिस्से में ग्राहक के बैठने की जगह। आधे हिस्से को दो भागों में टाट के पर्दे से अलग किया गया था। सामने का भाग रसोई के रूप में था और बाकी आधा हिस्से में लगता ह,ै उसकी आरामगाह थी।

आरामगाह से किसी वृद्ध के खांसने की आवाज़ आई, साथ ही लरज़ती आवाज़ में एक प्रश्न-''पसिन्जर आ गई का?''

महिला ने जवाब दिया-''अभी नहीं ।''

यूनुस को टाईम-पास करना था, सो उसने आर्डर दिया-''कड़क चाय, चीनी-पत्ती तेज रहेगी।''

महिला उसकी मंशा समझ गई।

उसने बर्तन में स्पेशल चाय के लिए दूध डाला और फिर ढेर सारी पत्ती डालकर चाय खूब खौला दी।

चाय उसने दो गिलासों में ढाली।

एक चाय यूनुस को दी और दूसरी स्वयं पीने लगी।

यूनुस ने महसूस किया कि ठंड इतनी ज्यादा है कि चाय गिलास में ज्यादा देर गरम न रह पाई।

यूनुस ने चुस्की लेते हुए चाय का आनंद उठाया।

उसे अपने 'डाक्टर-उस्ताद' की बात याद हो आई...

डोज़र आपरेटर शमशेर सिंह उर्फ़ 'डाक्टर-उस्ताद' को ठंड नहीं लगती थी। वह कहा करता कि ठंड का इलाज आग या गर्म कपड़े नहीं बल्कि शराब, शबाब और कबाब है।

यूनुस ने शराब तो कभी छुई नहीं थी, किन्तु शबाब या कबाब से उसे परहेज़ न था।

शबाब के लिए तो वैसे भी सिंगरौली क्षेत्र बदनाम है।

औद्योगिक विकास की आंधी के कारण देश भर के उद्योगपति-व्यवसायी, टेक्नोक्रेट और कुशल- अकुशल श्रमिक-शक्ति सिंगरौली क्षेत्र में डेरा डाले हुए हैं। पहले तो लोग बिना परिवार के यहां आते हैं।

बिना रहाईशी इंतेज़ाम के ये लोग हर तरह की ज़रूरत की वैकल्पिक व्यवस्था के अड्डे तलाश कर लेते हैं। इसीलिए यहां ऐसे कई गोपनीय अड्डे हैं जहां जिस्म की भूख मिटाई जाती है।

ऐसे ही एक अड्डे से प्राप्त अनुभव को यूनुस ने याद किया।

दो

कल्लू नाम था उसका। वह बीना की खुली कोयला खदान में काम करता था।

यूनुस तब वहां कोयला-डिपो में पेलोडर चलाया करता था। वह प्राइवेट कम्पनी में बारह घण्टे की ड्यूटी करता था। तनख्वाह नहीं के बराबर थी। शुरू में यूनुस डरता था, इसलिए ईमानदारी से तनख्वाह पर दिन गुजारता था।

तब यदि खाला-खालू का आसरा न होता तो वह भूखों मर गया होता। फिर धीरे-धीरे साथियों से उसने मालिक-मैनेजर-मुंशी की निगाह से बच कर पैसे कमाने की कला सीखी। वह पेलोडर या पोकलेन से डीजल चुरा कर बेचने लगा। अन्य साथियों की तुलना में यूनुस कम डीजल चोरी करता, क्योंकि वह दारू नहीं पीता था।

कल्लू उससे डीजल खरीदता था।

खदान की सीमा पर बसे गांव में कल्लू की एक आटा-चक्की थी। वहां बिजली न थी। चोरी के डीजल से वह चक्की चलाया करता।

धीरे-धीरे उनमें दोस्ती हो गई।

अक्सर कल्लू उससे प्रति लीटर कम दाम लेने का आग्रह करता कि किसके लिए कमाना भाई। जोरू न जाता फिर क्यूं इत्ता कमाता। उनमें खूब बनती।

फुर्सत के समय यूनुस टहलते-टहलते कल्लू के गांव चला जाता।

कालोनी के दक्खिनी तरफ, हाईवे के दूसरी ओर टीले पर जो गांव दिखता है, वह कल्लू का गांव परसटोला था।

परसटोला यानी गांव के किनारे यहां पलाश के पेड़ों का एक झुण्ड हुआ करता था। इसी तरह के कई गांव इलाके में हैं जो कि अपनी हद में कुछ ख़ास पेड़ों के कारण नामकरण पाते हैं, जैसे कि महुआर टोला, आमाडांड़, इमलिया, बरटोला आदि। परसटोला गांव में फागुन के स्वागत में पलाश का पेड़ लाल-लाल फूलों का श्रृंगार करता तो परसटोला दूर से पहचान में आ जाता।

परसटोला के पश्चिमी ओर रिहन्द बांध की पानी हिलोरें मारता। सावन-भादों में तो ऐसा लगता कि बांध का पानी गांव को लील लेगा। कुवार-कार्तिक में जब पानी गांव की मिट्टी को अच्छी तरह भिगोकर वापस लौटता तो परसटोला के निवासी उस ज़मीन पर खेती करते। धान की अच्छी फ़सल हुआ करती। फिर जब धान कट जाता तो उस नम जगह पर किसान अरहर छींट दिया करते।

रिहन्द बांध को गोविन्द वल्लभ पंत सागर के नाम से भी जाना जाता है। रिहन्द बांध तक आकर रेंड़ नदी का रूका और फिर विस्तार में चारों तरफ फैलने लगा। शुरू में लोगों को यकीन नहीं था कि पानी इस तरह से फैलेगा कि जल-थल बराबर हो जाएगा।

इस इलाके में वैसे भी सांमती व्यवस्था के कारण लोकतांत्रिक नेतृत्व का अभाव था। जन-संचार माध्यमों की ऐसी कमी थी कि लोग आज़ादी मिलने के बाद भी कई बरस नहीं जान पाए थे कि अंग्रेज़ी राज ख़त्म हुआ। गहरवार राजाओं के वैभव के क़िस्से उन ग्रामवासियों की जुगाली का सामान थे।

फिर स्वतंत्र भारत का एक बड़ा पुरूस्कार उन लोगों को ये मिला कि उन्हें अपनी जन्मभूमि से विस्थापित होना पड़ा। वे ताम-झाम लेकर दर-दर के भिखारी हो गए। ऐसी जगह भाग जाना चाहते थे कि जहां महा-प्रलय आने तक डूब का ख़तरा न हो। ऐसे में मोरवा, बैढ़न, रेणूकूट, म्योरपुर, बभनी, चपकी आदि पहाड़ी स्थानों की तरफ वे अपना साजो-सामान लेकर भागे। अभी वे कुछ राहत की सांस लेना ही चाहते थे कि कोयला निकालने के लिए कोयला कम्पनियों ने उनसे उस जगह को खाली कराना चाहा। ताप-विद्युत कारखाना वालों ने उनसे ज़मीनें मांगी। वे बार-बार उजड़ते-बसते रहे।

कल्लू के बूढ़े दादा डूब के आतंक से आज भी भयभीत हो उठते थे। उनके दिमाग से बाढ़ और डूब के दृश्य हटाए नहीं हटते थे। हटते भी कैसे? उनके गांव को, उनकी जन्म-भूमि को, उनके पुरखों की क़ब्रगाहों-समाधियों को इस नामुराद बांध ने लील लिया था।

ये विस्थापन ऐसा था जैसे किसी बड़े जड़ जमाए पेड़ को एक जगह से उखाड़कर दूसरी जगह रोपा जाए...

क्या अब वे लोग कहीं भी जम पाएंगे?

कल्लू के दादा की आंखें पनिया जातीं जब वह अपने विस्थापन की व्यथा का ज़िक्र करते थे। जाने कितनी बार उसी एक कथा को अलग-अलग प्रसंगों पर उनके मुख से यूनुस को सुन चुका था।

दादा एक सामान्य से देहाती थे। खाली न बैठते। कभी क्यारी खोदते, कभी घास-पात उखाड़ते या फिर झाड़ू उठाकर आंगन बुहारने लगते। दुबली-पतली काया, झुकी कमर, चेहरे पर झुर्रियों का इंद्रजाल, आंखों पर मोटे शीशे का चश्मा, बदन पर एक बंडी, लट्ठे की परधनी, कंधे पर

या फिर सिर पर पड़ा एक गमछा और चलते-फिरते समय हाथों में एक लाठी।

वह बताते कि उस साल बरस बरसात इतनी अधिक हुई कि लगा इंद्र देव कुपित हो गए हों। आसमान में काले-पनीले बादलों का आतंक कहर बरसाता रहा। बादल गरजते तो पूरा इलाका थर्रा जाता।

यूनुस भी जब सिंगरौली इलाके में आया था तब पहली बार उसने बादलों की इतनी तेज़ गड़गड़ाहट सुनी थी। श्शहडोल ज़िले में पानी बरसता है लेकिन बादल इतनी तेज़ नहीं गड़गड़ाया करते। शहडोल जिले में बारिश अनायास नहीं होती। मानसून की अवधि में निश्चित अंतराल पर पानी बरसता है। जबकि सिंगरौली क्षेत्र में इस तरह से बारिश नहीं होती। वहां अक्सर ऐसा लगता है कि शायद इस बरस भी बारिश नहीं होगी। एक-एक कर सारे नक्षत्र निकलते जाते हैं और अचानक कोई नक्षत्र ऐसा बरसता है कि सारी सम्भावनाएं ध्वस्त हो जाती हैं। लगता है कि बादल फट पड़ेंगे। अचानक आसमान काला-अंधेरा हो जाता है। फिर बादलों की गड़गड़ाहट, बिजली की चमक के साथ ऐसी भीषण बरसात होती कि लगे जल-थल बराबर हो जाएगा। वैसे इधर-उधर से आते जाते लोगों से सूचना मिलती रहती कि पानी धीरे-धीरे फैल रहा है। लेकिन किसे पता था कि अनपरा, बीजपुर, म्योरपुर, बैढ़न, कोटा, बभनी, चपकी, बीजपुर तक पानी के विस्तार की सम्भावना होगी।

तब देश में कहां थी संचार क्रांति? कहां था सूचना का महाविस्फोट? तब कहां था मानवाधिकार आयोग? तब कहां थीं पर्यावरण-संरक्षण

की अवधारणा? तब कहां थे सर्वेक्षण करते-कराते परजीवी एन जी ओ? तब कहां थे विस्थापितों को हक़ और न्याय दिलाते कानून?
नेहरू के करिश्माई व्यक्तित्व का दौर था। देश में कांग्रेस का एकछत्र राज्य। नए-नए लोकतंत्र में बिना शिक्षित-दीक्षित हुए, ग़रीबी और भूख, बेकारी, बीमारी और अंधविश्वास से जूझते देश के अस्सी प्रतिशत ग्रामवासियों को मतदान का झुनझुना पकड़ा दिया गया। उनके उत्थान के लिए राजधानियों में एक से बढ़कर एक योजनाएं बन रही थीं। आत्म-प्रशंसा के शिलालेख लिखे जो रहे थे।

अंग्रजी राज से आतंकित भारतीय जनता ने नेहरू सरकार को पूरा अवसर दिया था कि वह स्वतंत्र भारत को स्वावलंबी और संप्रभुता सम्पन्न बनाने में मनचाहा निर्णय लें।
देश में लोकतंत्र तो था लेकिन बिना किसी सशक्त विपक्ष के।
इसीलिए एक ओर जहां बड़े-बड़े सार्वजनिक प्रतिष्ठान आकार ले रहे थे वहीं दूसरी तरफ बड़े पूंजीपतियों को पूंजी-निवेश का जुगाड़ मिल रहा था।
यानी नेहरू का समाजवादी और पूंजीवादी विकास के घालमेल का मॉडल।
आगे चलकर ऐसे कई सार्वजनिक प्रतिष्ठानों को बाद की सरकारों ने कतिपय कारणों से अपने चहेते पूंजीपतियों को कौड़ी के भाव बेचने का “ाडयंत्र किया।

पुराने लोग बताते हैं कि जहां आज बांध है वहां एक उन्नत नगर था।
गहरवार राजा की रियासत थी। केवट लोग बताते हैं कि अभी भी उनके महल का गुम्बद दिखलाई पड़ता है।
गहरवार राजा भी होशियार नहीं थे। कहते हैं कि उनके पुरखों का गड़ा धन डूब गया है।
असल सिंगरौली तो बांध में समा चुकी है।
आज जिसे लोग सिंगरौली नाम से पुकारते हैं वह वास्तव में मोरवा है।
तभी तो जहां सिंगरौली का बस-स्टेंड है उसे स्थानीय लोग पंजरेह बाजार नाम से पुकारते हैं।
कल्लू के दादा से खूब गप्पें लड़ाया करता था यूनुस।
वे बताया करते कि जलमग्न-सिंगरौली रियासत में सभी धर्म-जाति के लोग बसते थे।
सिंगरौली रियासत धन-धान्य से परिपूर्ण थी।
तीज-त्योहार, हाट-बाज़ार और मेला-ठेला हुआ करता था। तब इस क्षेत्र में बड़ी खुशहाली थी। लोगों की आवश्यकताएं सीमित थीं। फिर कल्लू के दादा राजकपूर का एक गीत गुनगुनाते-''जादा की लालच हमको नहीं, थोड़ा से गुजारा होता है।''
मिजऱ्ापुर, बनारस, रीवा, सीधी और अम्बिकापुर से यहां के लोगों का सम्पर्क बना हुआ था।
यूनुस मुस्लिम था इसलिए एक बात वह विशेष तौर बताते कि सिंगरौली में मुहर्रम बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता था।
सभी लोग मिल-जुल कर ताजिया सजाते थे।
खूब ढोल-ताशे बजाए जाते।

तैंयक तक्कड़ धम्मक तक्कड़
सैंयक सक्कर सैंयक सक्कर
दूध मलीदा दूध मलिद्दा...
खिचड़ा बंटता, दूध-चीनी का शर्बत पिलाया जाता।
सिंगरौली के गहरवार राजा का भी मनौती ताजिया निकलता था। मुसलमानों के साथ हिन्दू भाई भी शहीदाने-कर्बला की याद में अपनी नंगी-छाती पर हथेली का प्रहार कर लयबद्ध मातम करते।
'हस्सा-हुस्सैन....हस्सा-हुस्सैन'
कल्लू के दादा बताते कि उस मातम के कारण स्वयं उनकी छाती लहू-लुहान हो जाया करती थी। वह लाठी भांजने की कला के माहिर थे। ताजिया-मिलन और कर्बला ले जाने से पहले अच्छा अखाड़ा जमता था। सैकड़ों लोग आ जुटते थे। थके नहीं कि सबील-शर्बत पी लेते, खिचड़ा खा लेते। रेवड़ियोंं और इलाइची दाने का प्रसाद खाते-खाते अघा जाते थे।
यूनुस ने भी बचपन में एक बार दम-भर कर मातम किया था, जब वह अम्मा के साथ उमरिया का ताजिया देखने गया था। सलीम भाई तो ताजिया को मानता न था। उसके अनुसार ये जहालत की निशानी है। एक तरह का शिर्क (अल्लाह के अलावा किसी दूसरी ज़ात को पूजनीय बनाना) है। ख़ैर, ताजिया की प्रतीकात्मक पूजा ही तो करते हैं मुजाविर वगैरा...
यूनुस ने सोचा कि अगर लोग उस ताजिया को सिर झुका कर नमन करते हैं तो कहां मना करते हैं मुजाविर! उनका तो धन्धा चलना चाहिए। उनका ईमान तो चढ़ौती में मिलने वाली रक़म, फ़ातिहा के

लिए आई सामग्री और लोगों की भावनाओं का व्यवसायिक उपयोग करना ही तो होता है। साल भर इस परब का वे बेसब्री से इंतज़ार करते हैं। हिन्दू-मुसलमान सभी मुहर्रम के ताजिए के लिए चंदा देते हैं। उमरिया में तो एक से बढ़कर एक खूबसूरत ताजिया बनाए जाते हैं। लाखों की भीड़ जमा होती है। औरतों और मर्दों का हुजूम। खूब खेल-तमाशे हुआ करते हैं। जैसे-जैसे रात घिरती जाती है, मातम और मर्सिया का परब अपना रंग जमाता जाता है। कई हिन्दू भाईयों पर सवारी आती है। लोग अंगुलियों के बीच ब्लेड के टुकड़े दबा कर नंगी छातियों पर प्रहार करते हैं, जिससे जिस्म लहू-लुहान हो जाता है। ईरानी लोग जो चाकू-छूरी, चश्मा आदि की फेरी लगाकर बेचा करते हैं, उनका मातम देख तो दिल दहल जाता है। वे लोग लोहे की ज़ंजीरों पर कांटे लगा कर अपने जिस्म पर प्रहार कर मातम करते हैं।

कुछ लोग शेर बनते हैं।

शेर का नाच यूनुस को बहुत पसंद आया था।

रंग-बिरंगी पन्नियों और काग़ज़ों की कतरनों से सुसज्जित ताजिया के नीचे से लोग पार होते। हिन्दू और मुस्लिम औरतें, बच्चे और आदमी सभी बड़ी अकीदत के साथ ताजिया के नीचे से निकलते। यूनुस ने देखा था कि एक जगह एक महिला ताजिया के सामने अपने बाल छितराए झूम रही है।

डूब में बसे कस्बे में मुहर्रम के मनाए जाने का कुछ ऐसा ही दृश्य कल्लू के दादा बताया करते थे।

लोगों का जीवन खुशहाल था।

रबी और खरीफ़ की अच्छी खेती हुआ करती थी।

Thank You for previewing this eBook

You can read the full version of this eBook in different formats:

- HTML (Free /Available to everyone)
- PDF / TXT (Available to V.I.P. members. Free Standard members can access up to 5 PDF/TXT eBooks per month each month)
- Epub & Mobipocket (Exclusive to V.I.P. members)

To download this full book, simply select the format you desire below